# SYLLABUS

## Class – B.Com 3rd Sem

## Subject – Moral Values & Language

| | |
|---|---|
| **(PART-A)**<br>UNIT – I | नैतिक मूल्य –<br>1. शिकागो व्याख्यान – स्वामी विवेकानंद<br>2. धर्म और राष्ट्रवाद – महर्षि अरविन्द<br>3. सादगी – महात्मा गांधी<br>4. भय से मुक्ति – जे. कृष्णमूर्ति<br>5. चित्त जहाँ भय शून्य – रवीन्द्रनाथ ठाकुर |
| UNIT – II | हिन्दी भाषा –<br>1. कछुआ धर्म (निबंध) – चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी'<br>2. वह तोड़ती पत्थर (कविता) – निराला<br>3. सपनों की उड़ान (प्रेरक निबंध – ए.पी.जे. अब्दुल कलाम<br>4. चीफ की दावत (कहानी) – भीष्म सहानी<br>5. वर्ण–विन्यास (व्याकरणपरक) – विश्वनाथ प्रसाद मिश्र |
| UNIT – III | हिन्दी भाषा –<br>1. आदिवासी धरोहर (निबंध) – डॉ. श्यामाचरण दुबे<br>2. नारीत्व का अभिशाप (निबंध) – महादेवी वर्मा<br>3. ब्रह्माण्ड की रचना (वैज्ञानिक लेख) – जयंत विष्णु नार्लीकर<br>4. प्रमुख वैज्ञानिक आविष्कार (संकलित)<br>5. संधि और समास (संकलित) |
| **(PART-B)**<br>UNIT – IV | **English Language –**<br>1. Tree: Tina Morris<br>2. Night of the scorpion : Nisssim Ezekiel<br>3. What is Science? : George Orwell<br>4. On the Rule of the Road: A.G. Gardiner |
| UNIT – V | **English Language –**<br>Comprehension of Unseen Passages, Paragraph Writing, Report-writing, short essay on a given topic.<br>Correspondence skills (Formal & Informal Letters and Application)<br>Basic Language Skills: Tenses, prepositions, determiners, verbs & articles. |

renaissance
renaissance
renaissance

## यूनिट–1

### 1.1 शिकागों सम्मेलन सारांश

11 सितम्बर 1893 को अमेरिका के शिकागों शहर में एक सर्वधर्म सम्मेलन का आयोजन हुआ। इस ऐतिहासिक अधिवेशन में पूरे विश्व के धर्म प्रतिनिधि उपस्थित हुए। हिन्दू धर्म का प्रतिनिधित्व स्वामी विवेकानंदजी ने किया। अपने व्याख्यान में सबसे पहले स्वामीजी ने सम्बोधन किया ''अमेरिकावासी भाईयों और बहनों''। इनके इस भावनात्मक सम्बोधन का अमेरिका जनता पर गहरा प्रभाव पड़ा। अपने व्याख्यान में सर्वप्रथम उन्होंने हिन्दू धर्म के सभी मतमतान्तरों की ओर से धन्यवाद देते हुए अपने हिन्दू होने पर गर्व जताया, उन्होंने कहा कि मैं उस हिन्दू धर्म का अनुयायी होने पर गर्व महसूस करता हूँ जिसने पूरे विश्व को सहिष्णुता ओर सार्वभौमिक एकता का पाठ पढ़ाया। उन्होंने कहा की मुझे अभिमान है अपने देश पर जिसने विश्व के समस्त धर्मो को शोषित व पीड़ितों को शरणार्थियों के रूप में प्रश्रय दिया।

अपने व्याख्यान में स्वामी विवेकानंदजी ने भारतीय संस्कृति एवं धर्म की महत्ता बताते हुए हिन्दू धर्म के पवित्र ग्रंथ गीता के श्लोक को समझाकर धर्म सम्मेलन की पवित्रता एवं सहिष्णुता को व्यक्त किया। उन्होंने हठधर्मिता, धर्मान्धता एवं साम्प्रदायिक विद्वेष की भावना को सम्पूर्ण विश्व के लिए घातक बताया, क्योंकि यही घृणित प्रवृत्तियाँ युगों–युगों से इस सुन्दर पृथ्वी को रक्त से भरती रहती है। अगर ये ऐसी न होगी तो, मानव समाज इतना दानवी व अमानवीय न होता। अपने व्याख्यान में उन्होंने मानव जाति के कल्याण के लिए आपसी कटुताओं को दूर कर प्रेम सद्भाव प सहिष्णुता की क्रान्ति का शंखनाद किया।

धर्म के विषय में विवेकानंद जी के विचार थे कि – सभी धर्मों का सम्मान करना चाहिए। धर्म को थोपा नहीं जाना चाहिए। उन्होंने उदाहरण दिया की यदि बीज भूमि में बो दिया गया और मिट्टी वायु और जल उसके आसपास रख दिये गये, तो क्या बीज किसी एक का हो जाएगा या उसी के अनुसार बढ़ेगा। ऐसा नहीं है बीज तो अपने वृद्धि के नियम से ही बढ़ेगा। ऐसा ही धर्म के संबंध में ह। प्रत्येक धर्म का अपना सार है, अपना सोच है। अन्त सबका एक है, परम तत्व की शरण में जाना। अतः प्रत्येक धर्म का सम्मान करना चाहिए। गीता का उदाहरण देते हुए कहा कि भगवान कृष्ण कहते है कि जो कोई मेरी ओर जाता है, चाहे किसी भी मार्ग से अन्त में मेरे तक ही पहुँचते है। विवेकानंद जी ने यह विश्वास जताया कि एक समय ऐसा आएगा जब प्रत्येक धर्म की पताका पर यह लिखा होगा कि सहायता करो, लड़ो मत, पर भाव विनाश, समन्वय और शांति न कि मतभेद और कलह। अंत में स्वामीजी ने मंच से धन्यवाद दिया उन लोगों को जिन्होंने अपने धर्म के बारे में बताया। उस महान् व्यक्ति को धन्यवाद जिसके दिमाग में सर्वप्रथम इस धर्म सम्मेलन का ख्याल आया, उन्हे धन्यवाद जिन्होंने इसे फलीभूत किया। प्रत्येक श्रोता मंडली को धन्यवाद दिया, जिन्होंने प्रेम, सद्भाव, शांति व सौहार्द के वातावरण में इसे सुना।

**1. संक्षिप्तियाँ–**

संक्षिप्ति का कोषगत अर्थ है– अल्पाक्षर शब्द संक्षेप, शब्द संकेत या संकेत चिह्न है। डॉ. हरदेव बाहरी ने इसे अंग्रेजी के ऐब्रीवेशन शब्द का हिन्दी रूपांतरण बताया है।

परिभाषा– ''शब्दों के वे संकेत या चिह्न जो कालांतर में अपने आप में शब्दों की तरह प्रयुक्त होते है; संक्षिप्ति कहलाते है।

उदा. रा. प. नि.– राज्य परिवहन निगम
रा. सु. का – राष्ट्रीय सुरक्षा कानून
यू. जी. सी. यूनिवर्सिटी ग्रांट कमीशन
एम. पी. मध्यप्रदेश।

**संक्षिप्त के रूप**– 1. मौखिक 2. लिखित

**विशेषताएँ–**

1. यह अपने आप में पूर्ण होती है
2. यह स्वंतत्र शब्द है।
3. संक्षिप्ति मूल शब्द का अर्थ वहन करती है
4. इसमें समय की बचत होती है।
5. इसमें मुख में सुख होता है।

## 1.2 धर्म और राष्ट्रवाद (महर्षि अरविन्द)

**सारांश–** महर्षि अरविन्द के अनुसार अध्यात्म ही राष्ट्रवाद है, वे राष्ट्रवाद को एक विचार मानते थे और धर्म को आस्था। महर्षि अरविन्द हिन्दू धर्म को सनातन धर्म मानते थे। सनातन धर्म विश्वव्यापी धर्म हैं। यह धर्म विविध धर्मों को अपने अन्दर समाहित कर लेता है, अतः जो धर्म सर्वधर्म को समाहित करे, वहीं सनातन धर्म हैं।

**सनातन धर्म का विशेषताएँ–**

1. सनातन धर्म सर्वधर्म का सम्मान करता हैं तथा यह धर्म ईश्वर को हमारे निकट होने का आभास करवाता हैं।
2. सनातन धर्म मानव और ईश्वर के बीच माध्यम का कार्य करता है। इसके द्वारा मानव ईश्वर को प्राप्त कर सकता है।
3. सनातन धर्म सत्य पर आधारित है, सत्य को पहचानने का साधन सनातन धर्म हैं।
4. यह धर्म वैज्ञानिक अविष्कारों एवं दर्शनशास्त्र का पूर्वाभास करता हैं।
5. संसारिक जीवन को ईश्वर की लीला बतलाते हुए हमें कैसे अपना जीवन जीना हैं, उसका सत्मार्ग बतलाता है।
6. सनातन धर्म मानव मन में आस्था जाग्रत करता है कि भगवान सर्वथा सर्वव्यापी हैं।
7. सनातन धर्म जीवन का लक्ष्य निर्धारित करता है।
8. सनातन धर्म हर कण में विद्यमान तत्व का सत्य बतलाता हैं।
9. संसार में ईश्वरीय शक्ति के होने का बोध करवाता है

## 1.3 सादगी (मोहनदास करमचन्द्र गाँधी)

**सारांश–** सादगी निबन्ध महात्मा गाँधी की आत्मकथा 'सत्य के प्रयोग' का अंश है। गाँधीजी सादगी पाठ के माध्यम से मनुष्य को स्वावलम्बी बनने की शिक्षा देते हैं महात्मा गाँधी का जीवन अनुशासन, स्वावलम्बन, नियमितता, सदाचार एवं सत्य जैसी भावनाओं का साक्षी रहा है। महात्मा गांधी का यह फलसफा रहा है, कि जहाँ तक संभव हो सके मनुष्य को अपने दैनिक जीवन के सभी व्यक्तिगत कार्य स्वयं करना चाहिए और दूसरों को भी इस विषय में प्रेरित करना चाहिए। महात्मा गाँधी के जीवन के अनेक ऐसे संस्मरणों को इस निबन्ध निम्नाकिंत घटनाओं के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है।

**घटना क्रमांक – 1.** धोबी का खर्च घटाने के उद्देश्य से वे बाजार से कपड़े धोने का सामान और धुलाई कला पर एक पुस्तक पढ़कर कपड़े धोने का कार्य स्वयं करते हैं और अपनी पत्नी को भी सिखाते हैं। इस नये कार्य को करने से उन्हें आनन्द की अनुभूति होती है।

**घटना क्रमांक – 2.** एक बार जोहान्सबर्ग में गोखले एक बड़े भाषण में स्व. महादेव गोविंद रानाडे की प्रसादस्वरूप दी गई चादर को पहनना चाहते थे, लेकिन चादर पर शिकन होने और धोबी की व्यवस्था ना होने

से वे नहीं पहन पा रहे थे तब गाँधीजो ने प्रार्थना की कि वे स्वयं इस पर इस्त्री कर देगें लेकिन गोखलेजी को डर था कि वे चादर पर दाग तो नही लगा देंगे।

**घटना क्रमांक –3.** एक बार प्रिटोरिया में एक अंग्रेज हज्जाम द्वारा उनके बाल काटने से साफ इन्कार कर उनका अपमान किया। गाँधीजी ने उस वक्त भी यहीं सोचा कि – ''उस हज्जाम का कोई दोष नहीं है वह काले चमड़ीवालों के बाल काटने लगे तो उसकी रोजी मारी जाए। भारत में भी अछूतों के बाल उच्च वर्ण के हिन्दुओं को हज्जामों को काटने नहीं देते हैं।

## 1.4 भय से मुक्ति (जे. कृष्ण मूर्ति)

यह निबन्ध लेखक जे. कृष्णमूर्ति द्वारा लिखा गया है। इस निबन्ध में लेखक ने व्यक्ति की आदतों के सम्बन्ध में प्रकाश डालते हुए उसके जीवन में उत्पन्न होने वाले भय को विश्लेषित किया है।

लेखक ने आदत के सम्बन्ध में अपने विचार रखते हैं– आदतों को समाप्त किया जा सकता है, आदतों से छुटकारा पाने के लिए प्रायः दो धारणाएँ कार्य करती हैं–

1. पहली आदतों का प्रतिरोध करना।
2. दूसरी उसे समझकर उसके कारणों को जानने के बाद उसे समाप्त करना।

किन्तु मनुष्य प्रतिरोध करने से दूसरी आदत को बना लेता है एक को छोड़कर दूसरों की आदत में लिया हो जाता है। जैसे कोई मनुष्य यदि तम्बाकू का सेवन करता हो तो वह इस आदत को छोड़ने में सौंफ सुपारी खाने की आदत को पकड़ लेगा।

लेखक भय को भी एक आदत के रूप में बताते हैं। जिससे छुटकारा उसे प्रतिरोध के द्वारा नहीं बल्कि उसके कारणों को जानकार पाया जा सकता है। इसके लिए मनुष्य को अतिरिक्त ऊर्जा की आवश्यकता महसूस करते हैं। जिससे ऊर्जा आपकी आदतों का सामना कर सके।

लेखक भय के प्रकार बताते हुए उन पर अपने विचार रखते हैं– भय दो प्रकार का होता है, शरीरिक भय और मानसिक भय (या मनोवैज्ञानिक भय) जिस भय में कारण ज्ञात हो, उसे ज्ञात भय कहा जा सका है किन्तु अज्ञात भय हमारे मन की गहरी परतों में छुपे हुए रहते हैं। ज्ञात भय की अपेक्षा अज्ञात भय को समझना अत्यन्त कठिन है। यह अज्ञात भय हमारे मन की गहराइयों में दिए होते हैं, जिन्हें उद्घटित करना उसकी परतों को खोलना सम्भव नहीं होता।

लेखक मस्तिष्क की पूर्ण विश्रांति के लिए सपनों का न आना अच्छा मानते हैं, जिससे मनुष्य पूर्ण विश्रांति प्राप्त कर सकता है।

## 1.5 चित्त जहाँ भय शून्य (रवीन्द्रनाथ ठाकुर)

**सारांश–** यह कविता नोबल पुरस्कार से सम्मानित महान लेखक रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कृति 'गीताजंलि से अवतरित है। यह कविता सर्वप्रथम बांग्ला भाषा में रचित की गई थी तत्पश्चात् उसका हिन्दी भाषा में रूपान्तरण किया गया। प्रस्तुत कविता में कवि परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करते हुए भारतवासियों को स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए जाग्रत करते हुए कहत है कि हे परमपिता परमेश्वर! जहाँ मन मस्तिष्क में कोई भय नहीं हो, जहाँ ज्ञान की कोई सीमा नहीं हैं। जहाँ सदैव शीश ऊँचाई की ओर उठते हैं। जहाँ वसुन्धरा गृह – प्राचीर (दीवार) से विभाजित नहीं होती। जहाँ सर्वत्र मन की गहराइयों से सत्य वचन निर्झर (बहना) होते हैं। जहाँ ऊपर उठने के लिये (उत्थान हेतु) अनेक हाथ उठते हैं। जहाँ चारों दिशाओं में सदकर्म की धारा बहती है। जहाँ हजारों जिन्दगियों को जीवन का उद्देश्य मिलता है। जहाँ नीच आचरण मानव तो क्या प्रकृति में भी नहीं पाया जाता है, जहाँ चारों ओर सदैव आनन्द व्याप्त रहता है। ऐसे मेरे स्वर्ग जैसे मरे भारत को स्वतन्त्रता का मन्त्र दो। सर्वत्र देशवासियों को स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए जाग्रत कर दो।

## यूनिट–2

### 2.1 कछुआ धर्म (चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी')

**सारांश–** चन्द्रधर शर्मा गुलेरीजी के कछुआ धर्म निबन्ध के माध्यम से निश्चित रूप से हिन्दुस्तानी सभ्यता और संस्कृति को नये विचारणीय आयाम प्रदान किए है। एक विचारात्मक निबन्ध है। गुलेरीजी ने यह स्पष्ट रूप से समझाने का प्रयास किया है कि मर्यादा और सीमा में रहकर संयोजित रूप से कार्य करते हुए मानवीय मूल्यों का संरक्षण करना नैतिकता, समन्वयता, सौहार्द्र जैसे गुणों को सर्वव्यापी बनाना हमारा कर्म होना चाहिए, लेकिन इसका आशय यह कदापि नहीं है कि हम अन्याय और अत्याचार को सहन करते जाय, क्योंकि जब तक हम कछुआ धर्म त्याग कर अन्याय के विरूद्ध आवाज नहीं उठायेंगे तब तक एक स्वच्छ व समाज की कल्पना करना निरर्थक है।

कछुआ धर्म की विस्तृत व्याख्या करते हुए गुलेरीजी ने स्पष्ट किया है कि हिन्दू सभ्यता कछुआ धर्म का पालन बहुत तल्लीनता के साथ करती है। जिस प्रकार कछुआ विषम व विपरीत परिस्थितियों और संघर्षो में अपना सिर छिपा लेता है तथा अपनी लौह समान पीठ को अपनी ढाल बनाकर समस्या से बच निकलने की कोशिश करता है, ठीक वैसा ही समाज के कतिपय लोग करने लगे हैं। वे किसी समस्या का समाधान करने की अपेक्षा उससे बच निकलने का मार्ग निकालते रहते हैं। लेखक ने मनुष्य की भीरू प्रवृत्ति जैसे सत्य का साथ ना देना, अन्याय के विरूद्ध आवाज ना उठाना, अनुचित स्थितियों में बिना विरोधाभास के समायोजित हो जाना आदि पर कड़ा प्रहार करते हुए यह संदेश दिया है कि अपने स्वविवेक से काम लें। किसी के कहने पर शक्कर का सेवन बन्द कर देना, कुएँ पर पादरी द्वारा यह कह दिए जाने पर कि 'मैंने इसमें तुम्हारा अभक्ष्य डाल दिया है' बिना सोचे समझे जल फेंक देने की अपेक्षा मुम्बई जाकर पश्चाताप करना। यह सभी कृत्य मनुष्य की अवस्थ मानसिक स्थिति का चित्र प्रस्तुत करते है।

### 2.2 वह तोड़ती पत्थर (सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला')

**सारांश–** यह एक प्रगतिवादी कविता है। महाकवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' द्वारा रचित यह कविता एक मार्मिक एवं हृदयस्पर्शी कविता है। कविता में कवि ने एक नवयुवती मज़दूर का वर्णन किया हैं। कवि कहते हैं कि इलाहाबाद के पथ पर एक नवयुवती को पत्थर तोड़ते देखा जहाँ पर न तो कोई छायादार पेड़ था, ना ही कहीं बैठकर वह पल भर विश्राम कर सके न कोई और आश्रय था। चिलचिलाती धूप में श्याम वर्ण की यह महिला हाथ में बड़ा भारी हथौड़े से बार–बार पत्थरों पर प्रहार कर उन्हें तोड़ रही है, वहीं सामने पेड़ अट्टालिकाएँ, बँगले हैं, जहाँ लोग एशोआराम में रहते हैं। कवि कह रहे है कि जैसे–जैसे धूप अपने चरम पर पहुचँ रही है, गर्मी बढ़ती जा रही है। सूर्य भी तमतमा रहा है। शरीर को झुलसाने वाली लू (गर्म हवा) चल रही है। भीषण गर्मी में धरा रूई के समान जल रही है। चारों ओर धूल की चिन्गारियाँ फैल रही ह, फिर भी वह युवती पत्थर तोड़ती जा रही है।

जब वो महिला कवि को अपनी ओर दया की दृष्टि से निहारते हुए देखती है तो सहसा उसकी नजर सामने की ओर खड़े विशाल भवन की ओर उठती है, उस भवन के निर्माण में उसने अपना खून पसीना बहाया था, लेकिन आज उस भवन की छाया में दो पल भी आराम करने का अधिकार नहीं हैं। एक ओर तो भवन में एक ऐसा वर्ग भी है जो इस महिला मज़दूर के योगदान को भूलकर सुखमय जीवन व्यतीत कर रहा है। यह अनुभव जैसे ही उस महिला को होता है वैसे ही वह आहत हो जाती है। अपनी वर्तमान परिस्थितियों के साथ समझौता करती हुई वह महिला मज़दूर फिर अपने कार्य में लीन यह सोचती है कि यही उसका भाग्य है, यही उसकी नियति है। मानो वह ऐसा कह रही हो 'मै तोड़ती पत्थर' क्योंकि यही जीवन है।

## 2.3 सपनों की उड़ान – ए.पी.जे. अब्दुलकलाम

15 अक्टूबर 1931 को तमिलनाडू प्रांत के रामे"वरम् नामक स्थान पर जन्मे डॉ. कलाम एक निम्न मध्यमवर्गीय परिवार से सबंध रखते थे। इंजीनियरिंग की परीक्षा उत्तीर्ण कर सन् 1958 में एरानोटिकल वैज्ञानिक इंजीनियरिंग में वि"ोष दक्षता हासिल की। अपनी अन्वेषण प्रतिभा को साकार करते हुए उन्होंन विदे"ा न जाते हुए दे"ा में ही वैज्ञानिक सेवाएँ दी। डॉ. आर वर्धराजन के निर्दे"ान में सुपर सोनिक टारगेट एयर क्राफ्ट बनाने का कार्य आरम्भ किया। इस क्षेत्र में उन्होने अनेक नवीन तकनीकों को खोजा। इसके बाद होवर क्राफ्ट को डिजाइन करने का कार्य उन्हें सौंपा गया। डा. कलाम सन् 1962 से 1983 के बीच इसरों में अनेक पदों पर कार्यरत रहे। उनके कु"ाल मार्गद"ान में 1980 में रोहिणी उपग्रह छोड़ा गया। आपने 1988 में **पृथ्वी**, 1990 म **नाग** एवं **आकाश** 1998 में **त्रिशूल** नामक प्रक्षेपास्त्र विकसित किए। इसलिए आपको **मिसाइल मेन** के नाम से भी जाना जाता है। सन् 1998 मे पोखरण में अनेक परमाणु विस्फोट आपके निर्दे"ान में किए गए तथा 18 जुलाई सन् 2002 में आपकी वि"िाष्ट उपलब्धियों के कारण वि"व के सबसे बड़े गणतंत्र का बाहरवाँ राष्ट्रपति चुना गया। आप सन् 1890 में **पद्म भूषण** से अलंकृत किए गए एवं 25 नवम्बर, सन् 1997 को **भारत रत्न** जैसी गरिमामय उपाधि से भी अलंकृत हुए।

धरती से जुड़कर स्वर्ग का स्वप्न देखने वाले कवि कलाकार, विचारक सदा सफल होते है। विश्व ने देश, जाति धर्म आदि की संकीर्ण सीमाओं से ऊपर उठकर उनका स्वागत किया है। उन्हें सराहा भी है। हमारे देश में भी स्वप्नदर्शी विभूतियों की कमी नहीं रही है, जिन्होंने अपने शुभ स्वप्न साकार कर अखिल विश्व को प्रभावित किया है। भारत के पूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम भी आधुनिक भारत की ऐसी ही स्वप्नदर्शी विभूति है। उन्होने सपनों को साकार किया है। बहुत से साधन सम्पन्न लोग जिन काया को नहीं कर पाते उन्हें सामान्य से लगने वाले लोग अपनी लगन, अध्यवसाय, आत्मविश्वास और सूझबूझ से पूर्ण कर दिखाते है। हमारे पूर्व राष्ट्रपति डॉ. कलाम के संदर्भ में भी यह तथ्य पूर्णरूपेण सत्य सिद्ध होता है। एक सामान्य परिवार के सदस्य का अपने व्यक्तित्व के बल पर राष्ट्रपति बनना निश्चय ही महत्वपूर्ण घटना है। जो लोग अपनी असफलताओं को ढँकने के लिए सुविधाओं और साधनों की कमी का रोना रोते है, उन्हें ऐसी अपूर्व सफलताओं से शिक्षा ग्रहण करना चाहिए। ऐसे ही लोगों को विश्व ने भी सराहा है।

## 2.4 चीफ की दावत (भीष्म साहनी)

**सारांश–** प्रसिद्ध उपन्यासकार भीष्म साहनी द्वारा रचित 'चीफ की दावत' एक ऐसी कहानी है जिसमें एक माँ ने अपने बेटे के लिए जीवनपर्यन्त संघर्ष और बलिदान दिया, उसका भविष्य संवारने के लिए अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया, किन्तु स्वार्थी संतान ने उसके इस बलिदान का उपहास करते हुए उसे केवल पदोन्नति प्राप्त करने का एक साधन मात्र मान लिया।

इस कहानी में शामनाथ गरीब एवं अत्यन्त छोटी पारिवारिक पृष्ठभूमि से निकला एक ऐसा व्यक्ति है, जिसके पिता का देहान्त हो चुका है, माँ ने बड़ी विकट परिस्थितियों में उसे अपने गहने बेचकर पढ़ाया–लिखाया है। अब एक विदेशी कम्पनी में अधिकारी है। शामनाथ ने पदोन्नति के लालच में अपने चीफ को प्रसन्न करने के उद्देश्य से अपने घर पर दावत पर बुलाया है। दावत में पाश्चात्य सभ्यता के आधार पर शराब, माँस, मछली, तथा विविध प्रकार के व्यंजनों की व्यवस्था की गई है। शामनाथ की पत्नी ने भी घर को बहुत सजाया है। शामनाथ और उनकी पत्नी को बूढ़ी माँ बोझ के समान नज़र आ रही है क्योंकि वे अपने आप को पढ़े–लिखे सुसंस्कृत और माँ को असभ्य समझते थे। उन्हें डर था कि कहीं माँ कुछ ऐसा न कर दे जिससे की चीफ नाराज़ हो जाए। उनकी पत्नी और वे दोनों नहीं चाहते थे कि चीफ की दृष्टि उन पर पड़े आर ना ही यह चाहते थे कि माँ सो जाए क्योंकि वे खर्राटें लेती थी। माँ को कुर्सी पर बैठने को कहा और अगर चीफ कुछ सवाल करे तो ठीक ढंग से उत्तर देने को कहा। शाम को पार्टी में दावत हुई। पहले शराब का दौर चला, फिर खाना खाने के लिए बैठक से बाहर निकले। बरामदें में माँ कुर्सी पर ही खर्राटें ले रही थी। शामनाथ को क्रोध

आ रहा था लेकिन धीरे से माँ को जगाया और कोठरी में जाकर सोने को कहा। चीफ ने मुस्कराकर 'नमस्ते' कहा और माँ के प्रति आदर भाव प्रकट किए। चीफ ने माँ से लोकगीत गाने को कहा। माँ ने लोकगीत सुनाया। चीफ के साथ सभी मेहमान प्रसन्न होकर तालियाँ बजाने लगे। चीफ ने पंजाबी दस्तकारी के विषय में जानना चाहा। तब माँ ने अपने हाथ की बनाई फुलकारी दिखाई तब चीफ बहुत खुश हुए और अपने लिए फुलकरी बनाने के लिए कह गए। शामनाथ मन ही मन खुश था, उसकी दावत सफल हुई चीफ के जाने के पश्चात् माँ कोठरी में बहुत रोई । शामनाथ खुशीपूर्वक माँ से मिलने गया जहाँ माँ ने उससे हरिद्वार जाने की इच्छा बताई। इस पर शामनाथ ने कहा – तुम चली जाओगी तो चीफ के लिए फुलकारी कौन बनाएगा? मेरी तरक्की भी नहीं होगी। बेटे तरक्की की बात सुनकर माँ फुलकारी बनाने के लिए सहमत हो गई और बेटे के भविष्य की उज्ज्वल कामना करने लगी।

## 2.5 वर्ण विन्यास (व्याकरणपरक) – डॉ. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

भारतीय संविधान में हिन्दी संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार की गई है। साथ ही अन्य राज्यों की राज्यभाषा के रूप में भी यह प्रतिष्ठिक है। हिन्दी में लिपि, वर्तनी व उच्चारण के स्वरूप में एक रूपता लाने के लिए वर्ण विन्यास किया गया। व्याकरणिक दृष्टि से भाषा को सुव्यवस्थित बनाने व भाषाई में वर्ण विन्यास की रचना कर लिया गया। सन् 1966 में शिक्षा मंत्रालय ने मानव देवनगरी वर्ण माला प्रकाशित कर हिन्दी वर्ण विन्यास में एक रूपता लाने का प्रयास किया।

प्रायः देखा गया है कि हिन्दी लिखते समय लोग देवनगरी वर्णमाला में प्रयुक्त वर्णों, मात्राओं में एक निश्चित दिशा पद्धति का निर्वाह नहीं करते। वर्ण विन्यास हिन्दी भाषा में एकरूपता लाने व भारतीय भाषाओं को अधि निकट लाने में सदैव प्रयत्नशील रहा है।

अनुस्वार का लिपि चिन्ह स्वर के ऊपर लगायी जाने वाली बिंदी है। संयुक्त व्यंजन की रचना में जब कोई नासिक्य व्यंजन प्रथम सदस्य के रूप में आता है, तो उस नासिक्य व्यंजन (ङ्•, ञ, ण, न्, म्) के लिए निर्धारित लिपि को न लिखकर उस सुंयक्त व्यंजन के पूर्व आये स्वर (अथवा स्वरयुक्त व्यंजन) के ऊपर बिंदी रख देते हैं। यह पूर्व के वर्ण पर रखी गई बिंदी आगे के व्यंजन में संयुक्त होकर आयी नासिक्य ध्वनि को अभिव्यक्त करती है।

इस प्रकार हिन्दी के अनुस्वार व्यंजन गुच्छ में आने वाली नासिक्य व्यंजन ध्वनियों का सूचक है और यह जिस वर्ण पर अंकित किया जाता है उसके आगे आये स्वतंत्र वर्ण के नासिक्य व्यंजन ध्वनियुक्त संयुक्त व्यंजन होने की सूचना देता है।

संस्कृत के कुछ ऐसे शब्द हिन्दी में यथावत् आ गये हैं, जिनके संदर्भ में ऊपर विवेचित सिद्धांत लागू नहीं होता, बल्कि संस्कृत में प्रचलित मान्यता ही लागू होगी–स्वयं,एवं, अहं (एवम्, स्वयम्)।

हिन्दी के अनुसार पाँचों नासिक्य व्यंजन ध्वनियों के लिए प्रयुक्त होता है।

| | | | |
|---|---|---|---|
| (–) | (ङ्•) | कंगन | (कङ्•गन) |
| | (ञ) | चंचल | (चञ्चल) |
| | (ण्) | मुंडन | (मुण्डन) |
| | (न्) | चंदन | (चन्दन) |
| | (म्) | कंपन | (कम्पन) |

अनुस्वार किसी भी भिन्न वर्ग के व्यंजन के साथ नहीं आता। जहाँ एक वर्ग के नासिक्य व्यंजन का दूसरे वर्ग के निरनुनासिक अथवा नासिक्य व्यंजन के साथ संयोग होता है वहाँ अर्ध नासिक्य व्यंजन का ही प्रयोग होता है, अनुस्वार चिन्ह का नहीं। अनुस्वार चिन्ह का प्रयोग करने पर गलती हो जाएगी और अनुस्वार का उच्चारण संबद्ध नासिक्य व्यंजन की भाँति न होकर आगे आने वाले व्यंजन के वर्गीय नासिक्य व्यंजन की भाँति होगा–

| | |
|---|---|
| जन्म (न् + म) | कण्व (ण् + व) |
| निम्न (म् + न) | अन्वय (न् + व) |
| कन्या (न् + या) | कन्हैया (ए + ह) |
| सौम्य (म् + य) | सान्निधि (न् + न) |

अतः जहाँ नासिक्य व्यंजन किसी अन्य वर्ग के निरनुनासिक अथवा नासिक्य व्यंजन के साथ आता है वहाँ न तो अनुस्वार का उच्चारण करना चाहिए, न ही अनुस्वार के लिपि चिन्ह बिंदी का प्रयोग करना चाहिए।

renaissance
renaissance
renaissance

## यूनिट–3

### 3.1 आदिवासी धरोहर (निबंध) – डॉ.श्यामाचरण दुबे

भारतीय संस्कृति और प्राचीन सभयता का जब भारत में आर्यों के साथ आगमन हुआ। तब आदिवासियों और अन्य जातियों का विलय हुआ। एक नवीन समाज का निर्माण हुआ तब कुछ आदिवासी प्रजातियों ने अपने मूल्यों एवं सभ्यता को जीवित रखा।

आदिवासियों को जनजाति कहा जाता है। जनजाति वह समूह है जो प्राचीन सभ्यता के प्रतिमानों (मूल्यों) से जुड़ा होता है। डॉ. मजुमदार के अनुसा– 'जनजाति परिवार या परिवारों के समूह का संकलन है। जिसका अपना एक सामान्य नाम होता है, जिसके सदस्य एक निश्चित भू–भाग में रहते हैं, सामान्य भाषा बोलते हैं और विवाह व्यवसाय या उद्योगों के विषय में कुछ निषेधों का पलन करते हैं।

जनजातीय समाज की भारत में एक पृथक पहचान है। इनकी अनेक सांस्कृतिक परम्पराएँ हैं। खान–पान, रीति–रिवाज, जीवन शैली, परिवेश, विवाह पद्धति, रहन–सहन भिन्न है। धीरे–धीरे इनकी परम्पराओं में बदलाव आवश्य आ रहा है, किन्तु आज भी इनकी सांस्कृतिक पहचान बरकरार है।

**विशेषताएँ–**

1. हस्तकौशल
2. संयुक्त परिवार प्रणाली
3. नारी का सम्मान
4. स्वालम्बन
5. बुजुर्गो का सम्मान
6. सामंजस्य की भावना

**भारतीय जनजातीय समस्याएँ**

1. पलायन
2. बंधुआ मजूदरी
3. हिंसक जानवरों के हमले
4. बेगारी
5. रूग्णता
6. विस्थापन का संकट
7. ऋणग्रस्तता
8. अशिक्षा
9. शोषणग्रस्तत

### 3.2 नारीत्व का अभिशाप (निबंध)– महादेवी वर्मा

**सारांश** : जब परमात्मा की कृपा से सृष्टि का सृजन हुआ। तक स्वयं परमात्मा ने नारी को अर्धांगिनी की संज्ञा देकर ब्रह्माण्ड में नारीत्व के महत्व को दर्शाया लेकिन दुर्भाग्यवश शनैः शनैः को दुर्बल मानकर इस समाज ने कभी प्रताड़नाओं के रूप में कभी अत्याचार के रूप में तो कभी बलात्कारी जैसे घिनौने कृत्य के रूप में उसके अस्तित्व पर कुठाराघात किया। महादेवी वर्मा द्वारा रचित इस लेख में जहाँ एक ओर नारी की प्राचीन से वर्तमान तक की करण, दयनीय और असहनीय स्थति का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है वहीं दूसरी ओर समाज में विधवा नारी, नारी अपहरण, नारी स्वतन्त्रता तथ पुरूष प्रधान समाज का नारी के प्रति जो नकारात्मक दृष्टिकोण है, उस पर भी अपनी लेखनी चलाने का प्रयास किया गया है।

(1) महादेवी वर्मा ने 'नारीत्व का अभिशाप' के माध्यम से उसकी मुक्ति का मार्ग को सुलझाने का प्रयास करते हुए कहा है कि यदि ये रूढिवादी समाज अपनी निम्न मानसिकता से परे उठकर महिला कल्याण के प्रति अपना उत्तरदायित्व पूर्ण करे तो नारी की लगभग प्रत्येक समस्या का समाधान शीघ्रता से संभव है। केवल आवश्यकता है उसकी वेदान यथार्थ अनुभव करने की और एक ऐसे देव्यापी आन्दोलन की, जो इस दिशा में प्रयत्नशील साबित हो।

(2) प्रस्तुत निबंध में लेखिका के अनुसार 'स्त्री न स्वतंत्रयम अर्हति' अर्थात् नारी कहीं भी स्वतंत्र नहीं है। विवाह के पूर्व नारी अपने पिता एवं भाइयों के नियंत्रण में रहती है और विवाह के पश्चात् अपने पति एवं सन्ताअनों के नियंत्रण में रहती है। चाहे वह स्वर्णपिंजर की वंदिनी हो चाहे लौहपिंजर की, परन्तु बंदिनी तो वह है ही और ऐसी की जिसके निकट स्वतंत्रता का विचार तक पाप कहा जाएगा।

## 3.3 ब्रह्माण्ड की रचना (वैज्ञानिक लेख) जयन्त विष्णु नार्लीकर

पुरातन काल से मानव अपने चारों और फैले बह्माण के बारे में जिज्ञासु रहा है। ब्रह्माण्ड कहाँ तक फैला है? उसकी उत्पत्ति कग हुई? उसकी रचना के नियम कौन से हैं? ब्रह्माण का भविष्य क्या है?

ऐसे प्रश्नों पर दार्शनिकों, कवियों आदि विचारवंतों ने बहुत कुछ विचार–मंथ किया है। उपनिषदों में सृष्टि के बारे में कई मूलभूत प्रश्न पूछे गए हैं। ब्रह्माण को एक अंडे की उपमा हमारे पुराणों में दी गई – ऐसा अंडा जिसमें सब कुछ समाहित है। उत्तर यूरोप की नार्डिक सभ्यता में एक विशाल वृक्ष की कल्पना की गई जिसकी जड़ों से डालियों तक सभी भागों में चाँद, तारे, जीव, वनस्पति, आदि पाये जाते हैं।

ब्रह्माण कितना विशाल है इसका अभाव मानव को क्रमशः ही मिलता गया। हजार साल पहले मानव पृथ्वी को ब्राह्माण का केन्द्र स्थान मानता था। सवेरे उदय होने वाले और शाम को अस्त होने वाले सूर्य एवं रात में तारों की पूर्व से पश्चिम जाने वाली कक्षाएँ देख उसने अनुमा लगाया कि समूचा ब्रह्माण पृथ्वी का चारों ओर परिभ्रमण करता है।
पाँचवी सदी में आर्यभट्ट ने इस मत का खण्डन किया। अपने ग्रंथ आर्यभट्टीय में उन्होंने लिखाः

**अनुलोम गतिर्नौस्थः पश्यत्यचलं विलोमगं यद्यत्।**
**अचलानि भानि तदवत् समपश्चिमगानी लंकायाम्।।**

नाव में जाने वाले को तटवर्ती स्थित वस्तुएँ उल्टी दिशा में जाती दिखाई देती हैं, उसी प्रकार (अपनी धुरी की ओर परिभ्रमण करने वाली) पृथ्वी से देखने पर स्थिर तारे पश्चिम की ओर जाते प्रतीत होते हैं।

आर्यभट्ट का यह सिद्धान्त सही था, पर दुर्भाग्यवश उपेक्षित रहा। सोलहवीं सदीमें कोपर्निकस ने यही कहा और यह भी कहा कि सभी ग्रहों सहित पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है।

जैसे–जैसे इस सिद्धान्त की सत्यता स्पष्ट होने लगी, मानव ने यह अनुमान किया कि उसकी पृथ्वी का ब्रह्माण में कोई खास स्थान नहीं। फिर उसने सोचा कि यह तेजस्वी सूर्य तो ब्रह्माण में अनूठा है। उसका विश्वास था कि सूर्य हमारी आकाशगंगा के केन्द्र स्थान में स्थित है।

लेकिन यह अनुमान भी गलत साबित हुआ। हमें आकाशगंगा एक धूसर प्रकाशवान पट्टे की तरह आकाश में फैली दिखाई देती है। इसमें वास्तव में 200 अरब के करीब तारे हैं। सूर्य का उनमें कोई खास स्थान नहीं है। उसस छोटे–बड़े, धुधले , तेजस्वी अरबों तारे आकाशगंगा में मौजूद हैं।

जब 1608 में हॉलैंढ के चश्में बनाने वाले हान्स लेपर्शे ने लैंस की दूरबीन का अन्वेषण किया तो यह खोज खगोल दर्शन के लिए कितनी लाभदायी होगी इसे जाना इटली के वैज्ञानिक गैलीलिओ ने। गैलीलिओ पहला वैज्ञानिक था जो लम्बे वैज्ञानिक विवादों को प्रत्यक्ष प्रयोगों से निपटाने में मुस्तैद था। दूरबीन के द्वारा उसने ब्रह्माण के निरीक्षण करने शुरू किये।

अपनी दूरबीन से गैलीलिओं ने कई महत्वपूर्ण खोजें कीं, जो तत्कालीन विचार धारणाओं को आघात पहुँचाती थीं। उसने सूर्य पर काले धब्बे एवं चाँद पर गड्ढे देखे जिनसे ऐसा प्रतीत होता था कि ये आकाशस्थ वस्तुएँ सदोष हैं..... जबकि ऐसी धारण थी कि भगवान् ने इन वस्तुओं का आदर्श रूप में निर्माण किया है। उस समय की धारणा थी कि ग्रह तारे आदि सब पृथ्वी की परिक्रमा करते हैं, पर गैलीलिओं ने अपनी दूरबीन से चार उपग्रह देखे जो गुरू ग्रह की परिक्रमा करते थे।

**टिप्पणी**–

1. **प्रकाश वर्ष**– प्रकाश वर्ष यह वह दूरी है जो प्रकाश किरणें एक वर्ष में तय करती हैं। किलोमीटर के पैमाने पर यह दूरी है करीब नौ हजार अरब कि.मी., केन्द्र स निकला प्रकाश हम तक पहुँचने में तीस हजार वर्ष की अवधि लेता है।

2. **आकाशगंगा**– हमारी आकाशगंगा भी एक गैलेक्सी ही है। रात में आकाश में एक क्षितिज तक दिखने वाली चौड़ी चमकीली पट्टी जे पृथ्वी से नदी के समान आकाश में दीप्तिमान पट्टी के समान दिखाई पड़ती है, आकाशगंगा कहलाती है। आकाशगंगा में लगभग एक खराब तारे हैं हमारा सौर परिवार आकाशगंगा का सदस्य है। तारों के मध्य में जो अँधेरी पट्टी दिखाई देती है, वह खगोलीय धूल के कारण है, जो दूसरी पार से आजे तारों के प्रकाश को राक लेती है। यही कारण है कि सूर्योदय और सूर्यास्त के समय सूर्य लाल दिखाई देता है, क्योंकि उसकी रोशनी वायुमण्ड की धूल से होकर गुजरती है। यह सर्पिल आकार की गैलेक्सी है, जिसका व्यास 1,00,000 प्रकाश वर्ष है।

3. **तारें**– गैसीय द्रव्य के उष्ण व स्वयं दीप्तिमान ब्रह्माण में स्थित खेगोलीय पिण्ड हैं। जो प्रकाश तथा विद्युत चुम्बकीय विकिरण उत्पन्न करते हैं, तारे कहलाते हैं। इनकी ऊर्जा का स्रोत नाभिकीय होता है। गैलेक्सी का 98% भाग इन्हीं तारों से बना है। भार के अनुसार तारे में 70% हाइड्रोजन, 28% हीलियम, 1.5% कार्बन–नाइट्रोजन–निऑन और 0.5% आयरन ग्रुप के भारी तत्व होते हैं। सूर्य भी एक तारा है, जो पृथ्वी के सबसे निकट है। प्रत्येक तारा अपनी स्वयं की चमक से चमकता है, जबकि ग्रह एवं चनद्रमा आदि सूर्य की रोशनी पाकर चमकते हैं। अधिकांशतः तारे सूर्य से कई गुना बड़े हैं, पर अत्यधिक दूरी के कारण छोटे नजर आते हैं।

## 3.4 प्रमुख वैज्ञानिक आविष्कार और हमारा जीवन

मानव ने अपनी विकास यात्रा में प्रकृति की शक्तियों का एवं उपयोग सदा से ही विज्ञान एवं प्रौद्योगिको के माध्यम से किया है। इन वैज्ञानिक आविष्कारों ने मनुष्य की जीवन–शैली को प्रभावित किया है। अनेक वैज्ञानिकों ने मानव–समाज को आदिम अवस्था से कृषि युग में लाकर खड़ा कर दिया है। औद्योगिक यंत्रों के आविष्कारों से औद्योगिक युग के नए अध्याय का सूत्रपात हुआ। इन आविष्कारों ने मानव जीवन और जगत को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया है। जिसका परिणाम हमारी जीवन शैली म देखा जा सकता है।

1. **आग का आविष्कार** – आदिम अवस्था में अपनी क्षुधापूर्ति हेतु मनुष्य ने फलों और कंद–मूलों को खोजा होगा। जंगल में लगी भयंकर आग में जले पशुओं को देखकर भोजन पकाना सीखा। निःसंदेह आग की खोज मानव सभ्यता का एक महत्वपूर्ण एवं प्रभाव"ाली कदम था।
2. **शून्य एवं दशमलव का आविष्कार** – शून्य एवं दशमलव पद्धति के आविष्कार का श्रेय भारत को ही प्राप्त है। विशुद्ध अंकगणित की दृष्टि से शून्य का प्रयोग 200 ई.पू. **'आचार्य पिंगले'** ने 'छंद–शास्त्र' में किया है। किसी भी संख्या को शून्य द्वारा भाग देने की दष्टि की स्पष्ट संकल्पना का आविष्कार 12 वीं सदी के प्रसिद्ध महानतम् गणितज्ञ **'भास्कराचार्य'** ने किया था।
3. **बाइसिकिल का आविष्कार** – इसका आविष्कार सन् 1813 में कार्ल फ्रीडरिख ने किया था। बाइसिकिल आज सर्वसुलभ और कम मूल्यवान साधन है। सन् 1839 में इंग्लैण्ड के 'कर्क पैट्रिक

मैकमिलन' ने इस दो साईकिल में पहिए में दोनों ओर पायदान लगा दिए। महत्वपूर्ण सुधार अयारलैण्ड के 'जान बायड डनलप' ने किया। उन्होंने दोनों पहियों में रबड़ के टायर एवं हवा भरे टयूब लगाने की व्यवस्था की। भारत में आवागमन का यह महत्वपूर्ण साधन है।

4. **रेलगाड़ी का आविष्कार** – भाप के इंजन द्वारा गाड़ी चलाने का पहला प्रयोग सन् 1769 में फ्रांस के एक इंजीनियर निकोलस जाजफ कगनाट ने किया था। दूसरा प्रयोग इंग्लैण्ड के 'विलियम मर्डक' ने किया। सन् 1808 में पटरियों पर भाप से चलने वाली रेलगाड़ियों का सफल प्रयोग 'रिचर्ड ट्रेविथिक ने किया। वास्तव में रेलगाड़ी के आविष्कार इग्लैंण्ड में जन्में **'जार्ज स्टीफेंसन'** थे, उन्होंने 1814 में ऐसी रेलगाड़ी का निर्माण किया जो कोयला लादकर 6.5 कि.मी. प्रति घंटे की चाल से चल सकती थी। उन्होंने भाप के इंजन में अनेक सुधार किए। 'जार्ज' ने अपनी प्रथम रेलगाड़ी का प्रदर्शन 27 सितबर, 1825 में किया।
5. **मुद्रण–यंत्र का आविष्कार** – जर्मन वैज्ञानिक **'जॉन गुटनवर्ग'** इस कला का आविष्कारक था।
6. **विद्युत का आविष्कार** – अमेरिकी वैज्ञानिक **'बेंजामिन फ्रंकलिन'** ने सन् 1852 में विद्युत का आविष्कार किया।
7. **टेलीफोन अथवा दूरभाष का आविष्कार** – **'अलेक्जेंडर ग्राहम बेल'** को टेलीफोन आविष्कार का जनक कहा जाता हैं।
8. **टेलीविजन का आविष्कार** – टेलीविजन के आविष्कार का श्रेय इंग्लैण्ड के वैज्ञानिक **जान बेयर्ड** को प्राप्त हुआ। उन्होंने सन् 1925 में टेलीविजन का एक मॉडल तैयार किया और वह टेलीविजन द्वारा चित्र प्रषित करने में सफल हो गए।
9. **कम्प्यूटर का आविष्कार** – कम्पयुटर आधुनिक युग का नवीनतम चमत्कार है। चार्ल्स बेबेज ने 1821 में इसकी संकल्पना बनायी तथा 1833 में इस यंत्र का निर्माण हुआ। 'प्रोफेसर हावर्ड एफीन' ने 1943 में मार्क–1 नाम के वैद्युत यांत्रिकीय कम्प्यटर का निर्माण किया। सन् 1939 में अमेरिका के 'जान वी. एटनासॉफ' ने इलेक्ट्रॉनिक डिजिटल कम्प्यूटर का पहला मॉडल तैयार किया। अतः 1950 में इलेक्ट्रॉनिक कम्प्यटर बना वाल्व और पंच किए हुए कार्डों की जगह अब माइक्रोप्रोसेसर चिप ने ने लिया।
10. **रेडियो का आविष्कार** – बिना तार की सहायता से सन्दश भेजने की विधि बेतार (वायरलेस) सन्दश अथवा रेडियो सन्दश कहते हे। रेडियों का आविष्कार **मारकोनी** ने किया।

## 3.5 संधि और समास–

संधि और समास दोनों में दो पदों में मेल दिखाई पड़ता है, परंतु दोनों में स्पष्ट अंतर है।

- संधि में दो निकटस्थ वर्णो का मेल होता है और समास में दो या अधिक पदों का।
- संधि में वर्णो के मेल के कारण ध्वनि में भी परिवर्तन होता है, समास में ऐसा नहीं होता।
- समास में दो पदो के बीच के प्रत्यय, परसर्ग, योजक आदि का लोप होता है, संधि में नहीं।
- समास की प्रक्रिया संपन्न होने के बाद बने पदों में संधि हो सकती है। जैसे –

| **समास** | | **संधि** |
|---|---|---|
| ज़िलाधीश | ज़िले का अधीश | (जिला+अधि+ईश) |
| महात्मा | महान है जो आत्मा | (महा+आत्मा) |

### समास के प्रकार

1. **द्वन्द्व समास**– द्वन्द्व का अर्थ है – जोड़ा, युग्म। द्वन्द्व में दोनों ही पद प्रधान होते हैं। पदो के बीच से और, तथा, एवं या, अथवा में से किसी योजक को हटाकर उनका युग्म बनाया जाता है। जैसे –

| समस्त पद | विग्रह |
|---|---|
| सुख–दुख | सुख और दुख |
| रूपया–पैसा | रूपया और पैसा |
| उलटा–सीधा | उलटा और सीधा |
| हाथी–घोड़े | हाथी और घोड़े |
| राम–लक्ष्मण | राम और लक्ष्मण |
| जल–वायु | जल और वायु |
| वेद–पुराण | वेद और पुराण |
| धर्माधर्म | धर्मा या धर्म |
| हार–जीत | हार या जीत |
| दो–चार | दो या चार |
| थोड़ा–बहुत | थोड़ा अथवा बहुत |
| हानि–लाभ | हानि अथवा लाभ |

2. **तत्पुरूष समास**– तत्पुरूष समास में उत्तर पद प्रधान होता है औ दोनों पदो के बीच से विभक्ति चिह्न (परसर्ग) को लोप होता है (ने को छोड़कर) जैसे–

| समस्त पद | विग्रह |
|---|---|
| हस्तलिखित | हाथ से लिखित |
| धनहीन | धन से हीन |
| रोगग्रस्त | रोग से ग्रस्त |
| राहखर्च | राह के लिए खर्च |
| देशभक्ति | देश के लिए भक्ति |
| युद्धभूमि | युद्ध के लिए भूमि |
| प्रसंगानुकूल | प्रसंग के अनुकूल |
| रामभक्त | राम का भक्त |
| पराधीन | पर के अधीन |
| स्वास्थ्यरक्षा | स्वास्थ्य की रक्षा |
| गृहस्वामी | गृह का स्वामी |
| वनवास | वन में वास |
| आपबीती | आप पर बीती |
| घुड़सवार | घोड़े पर सवार |
| ग्रामवास | ग्रम में वास |
| मालगोदाम | माल के लिए गोदाम |
| गंगाजल | गंगा का जल |
| जलधारा | जल की धारा |
| सिरदर्द | सिर में दर्द |
| भारतरत्न | भारत का रत्न |
| चायपत्ती | चाय की पत्ती |

| | |
|---|---|
| वनवास | वन में वास |

3. **कर्मधारय समास**– कर्मधारय समास वहाँ होता है, जहाँ–
   - पूर्व विशषण हो और उत्तरपद विशष्य, जैसे–नीलगाय, रक्तकमल
   - दोनों पदों में एक उपमेय और दूसरा उपमान, जैसे–धन"याम, पुरूषसिंह

| **समस्त पद** | **विग्रह** |
|---|---|
| नील गाय | नील है जो गाय |
| कमलनयन | कमल के समान नयन |
| नीलाबंर | नीला है जो अंबर |
| अंधविश्वास | अंधा है जो विश्वास |
| महादेव | महान है जो देव |
| नीलगगन | नीला है जो गगन |

4. **द्विगु समास**– द्विगु समास में पूर्वपद संख्यावाची वि"ोषण होता है और समस्त पद समूह का बोध कराता है। जैसे–

| **समस्त पद** | **विग्रह** |
|---|---|
| त्रिभुवन | तीन भुवनों का समूह |
| सप्तर्षि | सात ऋषियों का समूह |
| चौराहा | चार राहों का समूह |
| सतसई | सात सौ का समूह |
| दोपहरी | दो पहरों का समूह |
| नवग्रह | नौ ग्रहों का समूह |
| त्रिवेणी | तीन वेणियों का समूह |
| त्रिफला | तीन फलों का समाहार |
| सप्ताह | सात दिनों का समूह |
| बारादरी | बारह दरों (दरवाजों) का समूह |

5. **अव्ययोभाव समास**– अव्ययीभाव समास में पूर्वपद अव्यय होता है और समस्त पद भी अव्यय हो जाता है। जैसे –

| **समस्त पद** | **विग्रह** |
|---|---|
| यथासमय | समय के अनुसार |
| भरपेट | पेट भर |
| गलीगली | प्रत्येक गली में |
| निस्संदेह | बिना संदेह के |
| आजीवन | जीवन भर |
| आजन्म | जन्म भर |
| मनमाना | मन के अनुसार |
| घड़ी–घड़ी | प्रत्येक घड़ी |

6. **बहुब्रोहि समास** – इस समास में दोनों ही पदों का महत्व नहीं होता है किसी तीसरे पद की महत्ता होती है। दूसरे शब्दों में, पूरा समस्त पद किसी अन्य पद के लिए रूढ़ होता है। जैसे– दशानन = दश+आनन → रावण

यहाँ न तो पूर्वपद द"ा (दस) का अर्थ दस है, न उत्तरपद आनन (मुख) का। दोनों पद मिलकर रावण के लिए रूढ़ हो गए हैं। इसी प्रकार –

| **समस्त पद** | **विग्रह** |
|---|---|
| त्रिनयन | तीन है नयन जिसके अर्थात् (शिव) |
| चतुरानन | चार हैं आनन (मुँह) जिसके अर्थात (ब्रह्मा) |
| महावीर | महान है जो वीर अर्थात (हनुमान) |
| लंबोदर | लंबा है उदर जिसका अर्थात (गणेश) |
| नीलकंठ | नीला है कंठ जिसका अर्थात (शिव) |
| चक्रधर | चक्र को धारण करे जो अर्थात (विष्णु) |
| घनष्याम | घन के समान श्याम है जो अर्थात (कृष्ण) |
| चतुर्भुज | चार भुजाएँ हैं जिसकी अर्थात (विष्णु) |
| पद्मासना | पद्म (कमल) आसन है जिसका अर्थात (सरस्वती) |
| गोपाल | गायों को पालने वाला अर्थात (कृष्ण) |

renaissance
renaissance
renaissance

**UNIT-IV**

1. Tree: Tina Morris

2. Night of the scorpion: Nisssim Ezekiel

## Night of the Scorpion

**SUMMARY**

- By Nissim Ezekiel

The poet of 'Night of the Scorpion' is Nissim Ezekiel who narrates this poem by remembering his childhood when his mother was bitten by a scorpion. He says that the continuous rain for ten hours had driven the scorpion into the house, where it crawled beneath a sack of rice. In the dark room, when his mother entered, the scorpion parted the poison into her toe in fraction of seconds and probably went out again.

The peasants of the village collected in their house in large numbers like the swarms of flies and buzzed God's name about hundred times, praying to stop the movements of the scorpion, as they believed that with every movement of the scorpion, the poison would move in the mother's blood. So, with the candles and lanterns, they even searched their house to paralyze the evil scorpion. But he was not found.

The shadows they formed on the wall, too appeared a scorpion to the poet. The villagers prayed that the scorpion stops and the sins of mother's previous birth gets washed away that night or her sufferings might decrease the misfortunes of her next birth. They said this way the sums of evil might get balanced in this unreal world. They called the world unreal as everything in this world is temporary and births and deaths keep occurring in a cycle.

They even prayed to god that the poison purifies her flesh. They sat around the mother groaning in pain. There was peace o understanding on each face as they felt that she had approached her end. The condition was becoming very messy as more neighbours were entering the house with more candles and lanterns, the insects were also increasing and the rain too continued.

The poet's father being a sceptic and rationalist person tried powders, mixtures and herbs to cure the mother. However, he also tried prayers and blessings as it was a very problematic situation He poured some paraffin upon the bitten toe and burnt it. The priest was also performing his rites to tame the poison. Finally, after twenty hours, the sting was lost. **The mother, after getting cured, thanked god that the scorpion picked her and spared her children.**

3. What is Science? : George Orwell

## WHAT IS SCIENCE?

**SUMMARY** BY: George Orwell

George Orwell's "What is Science?" is addressed as a rebuttal to a statement by a "Mr. J. Stewart Cook". Cook believes that all people should be "scientifically educated" and scientist being "brought out of their isolation" to participate in politics and economics . Orwell begins to agree with this statement, however he immediately goes into the main focus of his essay: "What defines science." Orwell points out that Cook does not define science, and that science in the public's mind is simply things like chemistry. He points out that this is not the case, and that science encompasses many subjects. No one looks at a poet and says "He is a scientist". Orwell continues to poke at what describes a scientist by prescribing a test: "withstanding nationalism". He states sciences are supposed to be international, and should not have borders. Yet we see scientists keeping to their governments. Orwell uses Navi Germany as an example, showing how German scientists created and researched only for Germany. Orwell moves on to point out that a "scientific education" shouldn't sacrifice historical education and literacy. Furthermore, Orwell states that a "scientific education" should provide methods of solving problems, not just facts or single-minded thinking.

First off, this is quite the interesting read since I have read Orwell's *1984*. I would have never known Orwell had held such opinions on these types of matters. Orwell's thoughts on what a scientific education is and what science means is interesting. I have never thought what science meant, and his description of what the public believes it is is what I always imagined when I thought of science. This spiked my attention to continue reading. As I did, I agreed with many of his points. A scientific education should mean that we should learn how to take on problems in a scientific manner. By "Scientific manner", I mean we need to learn how to be able to solve problems, not only know solid facts on how to. An old proverb everyone knows, shortened, goes like this: "…teach a man to fish, and he will eat for a lifetime". If we teach people how to solve problems, how to think for themselves we would have a much more educated general public. That's not to say our general public isn't smart, but we hear stories of people doing things that goes against common sense.

Orwell argues that although science is highly valued in society, it should not be "piling up a lot of facts". Science should be the collective thought process of reasoning, and should coexist harmoniously with literature and art in a person's educational diet.

Orwell goes on to contrast the praise and glory given of "true" scientists ("physicist", "biologist") with other "irrelevant" occupations ("poet", "lawyer"). Orwell goes on to warn of the dangers of neglecting subjects other than science, as he believes in order to be "cultured" it is essential to study literature and arts in order to form morals. This warning comes in the form of a Nazi reference: of the scientists who become nationalistic slaves to the Nazi regime, and of physicists scrambling to unlock the secrets of atomic bomb destruction. Orwell further intensifies his persuasion through the use of diction.

He first questions science, reveals the vices of an un-rounded education, reaffirms science's value in society, then finally connects the points through the mention of the scientists who willingly chose not to participate in inhumane war efforts, as they have "some acquaintance with history or literature or the arts". Although Orwell uses light satire and humor to his point the essay reveals critical flaws in society's psychology which are appropriately addressed given this juncture in history when the lack of individual thinking and judgement lead to the onslaught of war.

4. On the Rule of the Road: A.G. Gardiner

**ON THE RULES OF THE ROAD**

**BY: A.G.GARDINER**

**SUMMARY**

In order to understand what Gardiner means when he says that liberty involves a social contract and not just personal liberty, think about what he says later in the essay. Later in the essay, he says

There are a lot of people in the world, and I have to accommodate my liberty to their liberties.

A fat old lady was walking with her basket down the middle of a street, in Petrograd, to the great confusion of the traffic and with no small threat to herself. It was pointed out to her that the pavement was the place for foot-passengers, but she replied: "I 'm going to walk where I like. We 've got liberty now." It did not occur to the dear old lady that if liberty unrestricted the foot-passenger to walk down the middle of the road, then the end of such liberty would be universal chaos. Everybody would be getting in everybody else's way and nobody would get anywhere. Individual liberty would have become social lawlessness.

What he means here is that we cannot simply think "I have liberty, and therefore I may do whatever I want." We have to realize that there are times when our actions can take away liberty from other people.

There is a danger of the world getting liberty-drunk in well to remind ourselves of what the rule of the road means. It means that in order that the liberties of all may be preserved, the liberties of everybody must be curtailed. When the policeman, say at Piccadilly Circus, steps into the middle of the road and puts out his hand, he is the symbol not of tyranny, but of liberty. You may not think so. You may, being in a hurry, and seeing your motor-car pulled up by this fellow, dishonour him to be interfering with your free use of the public highway? Then, if you are a reasonable person, you will reflect that if he did not incidentally, interfere with you, he would interfere with no one, and the result would be that Piccadilly Circus would be a maelstrom that you would never cross at all. You have to agree to a limitation of private liberty in order that you may enjoy a social order which makes your liberty a reality.

Because our actions can take away liberty from other people, we have to have a social contract. We have to agree to give up some of our liberty in order to keep most of that liberty. Earlier in the essay, Gardiner writes about what would happen if we did not give up our liberty when told to do so by a traffic cop (or, in modern times, a stop light). If everyone tried to keep their liberty to drive whenever and wherever they wanted, no one would have any liberty to drive at all. The intersections would be jammed as everyone tried to drive at once. It would be chaos. We are all liable to forget and unfortunately we are much more conscious of the imperfections of others in this respect than of our own. A reasonable consideration for the rights or feelings of others is the foundation of social conduct. I believe that the rights of small people and quiet people are as important to preserve as the rights of small nationalities. When I hear the aggressive, bullying horn which some motorists deliberately use, I confess that I feel something boiling up in me which is very like what I felt when Germany came trampling like a bully over Belgium. By what right my dear sir, do you go along our highways uttering that ugly curse on all who obstruct your path? Can't you announce your coming like a gentleman? Can't you take your turn? Are you someone in particular? I find myself wondering what sort of person it is who can sit behind that hog – like outrage without realizing that he is the spirit of Prussia incarnate and a very ugly spectacle in a civilized world.

Therefore, we cannot simply think that liberty means that we can do whatever we want. Instead, we have to make a social contract with other people. When we do that, we all give up some of our liberties so that everyone can live together in harmony. It is in the small matters of conduct, in the adherence of the rule of the road, that we pass judgment upon ourselves, and declare that we are civilized or uncivilized. The great moments of heroism and sacrifice are rare. It is the little habits of common place interaction that make up the great sum of life and sweeten or make bitter the journey.